**रस निष्पत्ति संबंधी मतों की व्याख्या**

**हिन्दी प्रतिष्ठा, तृतीय वर्ष, पत्र- 7**

काव्य को पढ़कर या सुनकर और नाटक को देखकर सहृदय पाठक या श्रोता या दर्शक के चित्त में जो लोकोत्तर आनंद उत्पन्न होता है वह रस कहलाता है |

आचार्य 'भरतमुनि' ने रस को नाटक का प्राण माना है | उनका मत है कि रस के बिना कोई नाट्य-प्रयोजन प्रवर्तित नहीं हो सकता | उन्होंने रस को परिभाषित करते हुए यह मान्यता व्यक्त की थी कि विभाव, अनुभाव और व्यभिचारि (संचारी भाव) के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है-

"विभावानुभाव व्यभिचारि संयोगाद्रस निष्पत्ति: |"

लोकजीवन में कारण, कार्य, और सहकार्य कारण क्रमश: काव्य में विभाव, अनुभाव और संचार्य भाव कहलाते हैं | इस प्रकार लोकजीवन में जैसे भाव को जगाने के कारण होते हैं, उसी प्रकार काव्य में भाव को जगाने वाले विभाव होते हैं | भाव के जगने पर अंग-विकार आदि लोकजीवन में देखे जाते हैं, वे हीं काव्य के अनुभाव कहलाते हैं और हृदय के स्थायी भाव को पुष्ट करने वाले लोकजीवन में जो संचरणशील सहायक भाव होते हैं उन्हें काव्य में संचारी भाव या व्यभिचारी भाव कहा जाता है | इस प्रकार भरतमुनि के उक्त सूत्र का सारांश यह है कि भाव को जगाने वाले 'विभाव' उनका अनुभव कराने वाले 'अनुभाव' और उनको पुष्ट करने वाले 'संचारी भाव' के सहयोग से रस की निष्पत्ति होती है |

आचार्य भरतमुनि ने अपने रस सूत्र की व्याख्या नहीं की है | आगे चलकर उस सूत्र के संयोग और निष्पत्ति शब्दों के अर्थ के संबंध में अलग-अलग विचार व्याख्याकारों ने प्रस्तुत किया हैं | फलत: इस सूत्र की अलग-अलग अनेक व्याख्याएं हुई, जिनमें निम्न चार मत प्रसिद्ध हैं :-

(1) भट्टलोलट का उत्पत्तिवाद या आरोपवाद

(2) शंकुक का अनुमितिवाद या अनुमानवाद

(3) भट्टनायक का भोगवाद या भुक्तिवाद

(4) अभिनवगुप्त का अभिव्यक्तिवाद

1)भट्टलोलट का उत्पत्तिवाद या आरोपवाद :- भट्टलोलट की दृष्टि में भरतमुनि के रस सूत्र में प्रयुक्त संयोग का अर्थ है - 'उत्पाद्य-उत्पादक' संबंध और निष्पत्ति का अर्थ है - उत्पत्ति |

भट्टलोलट की मान्यता थी कि काव्य में वर्णित आलंबन विभाव आश्रय के हृदय में कोई भाव जगाते हैं, वे हीं भाव अनुभाव से बोधगम्य होते हैं और संचारी भाव से पुष्ट होते हैं | इस प्रकार काव्य या नाटक के आश्रय में रस की उत्पत्ति होती है |

जब नाटक का दर्शक मंच पर अभिनेता और अभिनेत्री को कुशल अभिनय करते देखते हैं तो वे उन पर मूल चरित्र का आरोप कर स्वयं आनंद यानी रस का अनुभव करते हैं | नट या नटी अथवा अभिनेता-अभिनेत्री पर मूल चरित्र का आरोप करने के कारण इसे 'आरोपवाद' कहा गया है |

परवर्ती आचार्यों ने इस सिद्धांत का खंडन किया है | कारण यह है कि शकुंतला को देखकर दुष्यंत के मन में जो प्रेम जगा था वही श्रृंगार रस की सत्ता थी | नट-नटी पर उस रस का आरोप कर दर्शक उस रस का आभास पाता है | अब प्रश्न यह है कि नाटक के पात्र सर्वथा कल्पित भी हो सकते हैं फिर वहां मूल चरित्र का आरोप कैसे संभव है ?

दूसरी बात यह है कि आरोप के लिए जिस पर आरोप किया जाए और जिसका आरोप किया जाए दोनों का परिचय दर्शक को होना चाहिए | दुष्यंत-शकुंतला को पहचाने बिना उनका आरोप नट-नटी पर नहीं की जा सकती है |

2)शंकुक का अनुमितिवाद या अनुमानवाद :- आचार्य शंकुक ने उत्पत्तिवाद से असहमत होकर अनुमितिवाद की स्थापना की | उनकी मान्यता थी कि भरतमुनि के रस सूत्र में संयोग का अर्थ है- 'अनुमाप्य-अनुमापक' संबंध तथा निष्पत्ति का अर्थ है अनुमिति (अनुमान) | शंकुक की भी धारणा थी कि रस मूलतः काव्य या नाटक के मूल चरित्र में रहता है | दर्शक नट-नटी के कुशल अभिनय को देखकर उसमें मूल चरित्र का अनुमान कर लेता है |

शंकुक ने काव्य या नाटक के रसात्मक अनुभव को लौकिक अनुभव से विलक्षण माना है | काव्य के अनुभव की विलक्षणता को दर्शाने के लिए उन्होंने चित्र में अंकित घोड़े का अनुमान किया है | यह 'चित्र-तुरंग न्याय' के नाम से जाना जाता है | शंकुक के अनुसार लौकिक  ज्ञान चार प्रकार के होते हैं -

1)यथार्थ

2)अयथार्थ

3)संश्यात्मक और

4)सादृश्यमूलक |

(1)चित्र में अंकित घोड़ा यथार्थ नहीं है, क्योंकि वह चलता-फिरता खाता-पीता नहीं है |

(2)वह अयथार्थ भी नहीं है, क्योंकि यदि वह अयथार्थ ज्ञान होता तो सही ज्ञान होने पर उसका खंडन हो जाता |

(3)वह संश्यात्मक भी नहीं है, क्योंकि उसे देखकर यह शंका नहीं होती कि वह घोड़ा हीं है या कुछ और है |

(4)वह सादृश्यमूलक नहीं है, क्योंकि यह ज्ञान भी नहीं होता कि वह घोड़े के समान है |

अर्थात यह ज्ञान एक विलक्षण ज्ञान है | इसी प्रकार नाटक को देखकर दर्शक जो यह अनुमान लगाता है कि विशेष परिस्थितियों में मूल चरित्र ने विशेष रस का अनुभव किया है, वह अनुमान लौकिक ज्ञान से विलक्षण होता है |

परवर्ती आचार्यों ने काव्य के ज्ञान को विलक्षण मानने वाले इस सिद्धांत को तो स्वीकार किया है किंतु अनुमान के सिद्धांत का खंडन किया है, क्योंकि अनुमान संवेदना नहीं जगा सकता | वह भाव को तन्मय नहीं बना सकता |

3)भट्टनायक का भोगवाद या भुक्तिवाद :- भट्टनायक ने रस सूत्र की व्याख्या के क्रम में भुक्तिवाद या भोगवाद के सिद्धांत की प्रतिष्ठा करते हुए तीन शक्तियों की कल्पना की है | वह इस प्रकार हैं - 1) अभिधा

2)भावकत्व और

3)भोजकत्व

उनके अनुसार रस सूत्र में संयोग का अर्थ है - 'भोज्य-भोजक' संबंध और निष्पत्ति का अर्थ है - 'भुक्ति' | भट्टनायक की धारणा है कि अभिद्या व्यापार से काव्य के अर्थ का ज्ञान होता है फिर भावकत्व व्यापार से काव्य के अर्थ को साधारणीकृत कर सर्वजन संवेदय बना देता है और अंत में भोजकत्व व्यवहार से रस का भोग होता है |

'साधारणीकरण' के सिद्धांत की स्थापना भट्टनायक के इस सिद्धांत की महनीय उपलब्धि है | इस सिद्धांत को प्राय: सभी परवर्ती आचार्यों ने स्वीकारा है | किंतु भोगवाद का सिद्धांत समादृत नहीं हो सका |

4)अभिनवगुप्त का अभिव्यक्तिवाद :- आचार्य अभिनवगुप्त ने भोजकत्व या भावकत्व के व्यापारों की कल्पना को अनावश्यक माना है | उनकी धारणा थी कि परंपरा से स्वीकृत अभिद्या, लक्षणा और व्यंजना से भिन्न भावकत्व और भोजकत्व की कल्पना करना आवश्यक नहीं है | अतः भोगवाद से असहमत होकर किंतु साधारणीकरण के सिद्धांत को स्वीकार कर आचार्य अभिनवगुप्त ने अभिव्यक्तिवाद के सिद्धांत की स्थापना की | उनके अनुसार काव्य या नाटक के भावक के हृदय में

अनेक स्थायी भाव वासना रूप में सोए रहते हैं | काव्य के विभाव उन्हें उद्‌बुध करते हैं, अनुभाव उन्हें अनुभव योग्य बनाते हैं तथा संचारी भाव उनकी पुष्टि करते हैं, और इस प्रकार भावक के हृदय में स्थित स्थायी भाव हीं रस के रूप में परिणत होते हैं | लोकजीवन के सुखात्मक- दु:खात्मा स्थायी भाव काव्य-रस के रूप में अभिव्यक्त होकर आनंदात्मक बन जाते हैं | इस तरह अभिनवगुप्त की दृष्टि से रस के संयोग का अर्थ है - 'व्यंग्य-व्यंजक' संबंध और निष्पत्ति का अर्थ है - अभिव्यक्ति |

उक्त चारों सिद्धांतों की कुछ शक्तियां और कुछ सीमाएं हैं | अभिनवगुप्त का मत अधिकांश आचार्यों को मान्य है |

(आवश्यक निर्देश- छात्र-छात्राओं को निर्देशित किया जाता है कि वह इसी तरह से अन्य पाठों का भी भली प्रकार अध्ययन कर पाठ के केंद्रीय भाव को समझें। उससे संबंधित प्रश्न-उत्तरों का अभ्यास करते रहें। विश्वविद्यालय के द्वारा प्रदत्त पाठ्य-सामग्रियों में मूल पाठ के साथ पाठ का सारांश, उसका उद्देश्य, लेखक परिचय जैसे आवश्यक तत्व संकलित हैं। जिसका अध्ययन छात्रों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।)

डॉ. बद्रीनारायण सिंह

समन्वयक हिन्दी, नालंदा मुक्त विश्वविद्यालय, पटना ।